मानस-पूजन

'कौल-कल्पतरु' स्व० श्री शुक्ल जी की कुल-देवता

भगवती श्री बाला त्रिपुर सुन्दरी

विषय-प्रवेश

['कौल-कल्पतरु' स्वर्गीय पण्डित देवीदत्त शुक्ल ने हिन्दी के युग-निर्माता आचार्य द्विवेदी के उत्तराधिकारी के रूप में २५ वर्ष से भी अधिक समय तक किस कर्मठता और तत्परता के साथ राष्ट्र-भाषा हिन्दी की कितनी अनुपम सेवा की, इसका मूल्याङ्कन करना तो हिन्दी-भाषी विज्ञ महानुभावों का काम है; किन्तु दृष्टि-हीन और पक्षाघात-ग्रस्त हो जाने पर भी उन्होंने लुप्त-प्राय "शाक्त-धर्म" को किस प्रकार लोक-धर्म के रूप में समादृत कराने का अनवरत प्रयास किया, इसका उद्घाटन उन्हीं की अनूठी कृतियों के प्रकाशन के द्वारा किया जाय, यह हमारा उद्देश्य है। "कौल-कल्पतरु साधनमाला" के इस प्रथम पुष्प से स्पष्ट है कि आध्यात्मिक साधना की गूढ़-से-गूढ़ बातों को भी स्वर्गीय पूज्य श्री शुक्ल जी ने कितनी सरल शैली में लिपि-बद्ध करने का अतुलनीय महत्कार्य सम्पन्न किया है।—सं०]

१—भूमिका	... ...	३
२—मानस-पूजन	... ...	५
३—परिशिष्ट	... ...	११
१—मानस पुष्पाञ्जलि	...	११
२—पुष्पाञ्जलि (किङ्किणी स्तोत्र)	...	१३

'कौल-कल्पतरु' साधनमाला — प्रथम पुष्प

मानस-पूजन

P. N. Pandit, Shastri
M. A. M. O. L.
P. R. I. n Kash. ir Saivism

सम्पादक
व्रतशील शर्मा

शिवदेवी प्रकाशन

कल्याण मन्दिर, प्रयाग—६

प्रथम संस्करण] चैत्र २०२६ [मूल्य १·००

MOTILAL BANARSIDASS
Bungalow Road, Jawaharnagar
P. B. 1586 DELHI-7

प्रकाशक

शिवदेवी शुक्ल

शिवदेवी प्रकाशन

कल्याण मन्दिर

अलोपीबाग मार्ग

प्रयाग—६ (उ० प्र०)

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण

चैत्र २०२६

मूल्य १.००

मुद्रक

पण्डित राजनारायण मिश्र

परावाणी प्रेस

अलोपीबाग मार्ग

प्रयाग—६ (उ० प्र०)

भूमिका

'मानस-पूजन' का साधना में अपना विशेष महत्व है। संक्षेप में इसकी महत्ता को व्यक्त करना चाहें, तो कहना होगा कि साधक की सफलता वस्तुतः 'मानस-पूजन' में पारङ्गत होने पर ही निर्भर करती है। जितने शीघ्र वह सहज भाव से 'मानस-पूजन' करने में समर्थ बनेगा, उतने ही शीघ्र साधना की सिद्धि उसे प्राप्त होगी।

बाह्य पूजा का भी मुख्य ध्येय यही है कि साधक 'मानस-पूजन' का अभ्यासी बन सके। यही कारण है कि प्रायः सभी पूजन-पद्धतियों में मानस-पूजा का विधान अवश्य लिखा मिलता है। यह बात दूसरी है कि वह सूक्ष्म और भावना-प्रधान होने के कारण सामान्य साधकों को उतना आकृष्ट नहीं कर पाता।

इस सम्बन्ध में यह सूक्ति भी स्मरणीय है कि—'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध-मोक्षयोः' अर्थात् मन ही मनुष्य के बन्धन और मुक्ति का कारण है। अतएव जब तक मन पूजा-परायण नहीं होता, तब तक साधना में सफलता का मिलना संदिग्ध ही रहता है।

मन को पूजा-परायण बनाने के लिए ही बाह्य पूजन और अन्तः पूजन अर्थात् 'मानस-पूजन' का विधान अनुभवी महात्माओं द्वारा निर्दिष्ट किया गया। बाह्य पूजन के द्वारा साधक अन्तर्यजन की ओर सहज ही आकृष्ट होता है और क्रमशः वह 'मानस-पूजन' को हृदयङ्गम कर अनायास ही परम सिद्धि को प्राप्त कर लेता है।

'मानस-पूजा' की उक्त महिमा को ध्यान में रखकर ही श्रीमज्जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य सहित कितने ही साधकों उपासकों आदि ने अपने-अपने ढँग से उसका उपदेश समय समय पर किया है। विज्ञ पाठकों को उस सबकी जानकारी होगी ही।

'कौल-कल्पतरु' स्वर्गीय श्री शुक्ल जी ने अपनी अनूठी कृति "विनय सुधा" में पृष्ठ ५२ पर 'मानस-अर्चन' शीर्षक से एक सुन्दर रचना प्रकाशित की है। इस रचना में बड़ी सरल और सुबोध भाषा में 'मानस पूजन' का विधान इस प्रकार समझाया गया है कि उक्त रचना का पाठ करते-करते साधक 'मानस-पूजन' को ही सम्पन्न कर लेता है। उक्त रचना के अन्त में इस पूजन की "फल श्रुति" कितने स्पष्ट शब्दों में पूज्य श्री शुक्ल जी ने घोषित की है—

यह पूजा जो साधक करता,
मिलता उसको परमानन्द।
रहता सदा घूमता जग में,
निर्भय सुखी तथा स्वच्छन्द॥

ऐसी आनन्द दायक 'मानस-पूजा' को कण्ठस्थ कर हर साधक को आत्मोन्नति का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए। ऐसा करना उनके लिए स्वर्गीय पूज्य शुक्ल जी की उक्त रचना के कारण बहुत सरल हो गया है।

'कौल-कल्पतरु' स्वर्गीय श्री शुक्ल जी की उक्त अनूठी उपयोगी रचना का साधकों के लिए व्यावहारिक महत्व अनुभव कर उसे इस पुस्तिका-रूप में प्रकाशित किया जा रहा है।

आशा है कि साधक व महानुभाव इससे लाभान्वित होंगे। इसी में इस प्रकाशन की सार्थकता है।

वासन्तिक नवरात्र २०२९

—कुलभूषण

मानस

पूजन

[१]

मानस अर्चन शुभ यहाँ
करता हूँ दे ध्यान।
मिलती जिससे मुक्ति है,
परमानन्द महान ॥

[२]

पा छुट्टी सब काम से,
आ बैठा एकान्त।
हूँ अब तो एकाग्र में,
करके मन को शान्त ॥

[३]

हृदय कमल में इष्ट का,
करूँ प्रेम से ध्यान।
पूजन उसका यों करूँ,
साधक परम सुजान॥

[४]

यह है आसन हृदय-कमल का,
सुन्दर अति अभिराम।
हो आसीन इसी पर माता,
तेरी मूर्ति ललाम॥

[५]

सहस्रार-स्रुत सुधा समर्पित,
पाद-युग्म पर पाद्य-स्वरूप।
शिर पर अर्घ्य जननि है मन का,
जो सब भाँति अनूप॥

[६]

वही सुधा है करों आचमन,
और उसी से होवे स्नान ।
शब्दतत्व के वसन पहनिये,
गंधतत्व का गंधविधान ॥

[७]

पुष्परूप है चित्त समर्पित,
और प्राण हैं धूप-स्वरूप ।
तेजतत्व यह विमल दीप,
है नैवेद्य सुधा का कूप ॥

[८]

शब्द अनाहत का घंटा यह,
वायुतत्व का चामर भव्य ।
इंद्रियगण के कर्म सकल जो,
और चपलता मन की नव्य ॥

[९]

यही नृत्य माता है मोहक,
करती जिसकी तू जोह ।
अहङ्कार मद राग मोह औ,
अद्वेष अदम्भ अमोह ॥

[१०]

अमात्सर्य अक्षोभ लोभहु,
दश प्रकार के पुष्प समान ।
और अहिंसा इन्द्रियनिग्रह,
दया क्षमा औ ज्ञान महान ॥

[११]

परम पुष्प ये पाँच और भी,
करता हूँ मैं मां तुम्हें प्रदान ।
सुधासिन्धु औ मांस शैल त्यों
भर्जित मीनों की भी खान ॥

[१२]

मुद्राराशि भक्त घृत पूरित,
पायस मधुर कुलामृत पूर ।
कामक्रोध पशु की बलि देता
होवें विघ्न आप सब दूर ॥

[१३]

सकल मातृका की माला से
जप की मैंने सहित विधान ।
उसका फल तुझको मा अर्पित
ग्रहण कीजिये दे वरदान ॥

[१४]

फल-श्रुति

यह पूजा जो साधक करता,
मिलता उसको परमानन्द ।

रहता सदा घूमता जग में,
निर्भय सुखी तथा स्वच्छन्द ॥

परिशिष्ट

मानस-पुष्पाञ्जलि

बाह्य पूजा-पाठ के बाद साधक श्री जगदम्बा के प्रति पुष्पाञ्जलि का समर्पण कर अपने को कृतार्थ करते हैं। इस सम्बन्ध में 'कौल्पतरु' पूज्य श्री शुक्ल जी की दो कृतियाँ यहाँ प्रकाशित की जाती हैं।

पहली कृति में साधक अपने 'मन' को ही पुष्प-रूप में कल्पना कर मां के चरणों में अर्पित करता है। भक्ति-भाव से भरकर इस रचना का पाठ करने से सहृदय उपासक का हृदय सहज ही पुलकित हो उठता है और उसे रोमाञ्च का अनुभव होने लगता है।

दूसरी कृति तो प्रसिद्ध 'किङ्किणी स्तोत्र' का भावानुवाद ही है। उसकी विशेषता का अनुभव उसके पाठ करने से पाठक को स्वयं ही हो जायगा।

[१]

माता तेरी सेवा में है, मेरा आज एक ही फूल।
रंग न चोखा सुन्दर उसका, पड़ी हुई है उस पर धूल॥
देखा पतित उठाया मैंने, और मुझे तब वह भाया।
बहुत खुशी हो अपने मन में, तेरे हित हूं ले आया॥

[२]

है निर्गन्ध फूल यह मेरा, नीरस भी है उसी प्रकार।
पर मैं जान-बूझ कर तुझको, देता हूं इसका उपहार॥
जो कुछ मिले उसे ला रखना, यह विचार मेरे अनुकूल।
इसके सिवा सत्य यह भी है, जैसा मैं वैसा है फूल॥

[३]

भले-बुरे के भेद-भाव को, तुमने आप दिया है मेट।
जो मिल गया उसे हर्षित हो, करती ग्रहण समझकर भेट॥
जननी मुझे ज्ञात है तेरा, यह स्वभाव अत्यन्त ललाम।
इससे भी साहस कर लाया, पुष्प आज यह मा बे-काम॥

[४]

कहाँ कौन तू है कैसी तू, नहीं मुझे इसका कुछ ज्ञान।
पर सबके आगे बनता हूं, सिद्ध किया तुझको धर ध्यान॥
और दिखाता यह रहता हूं, स्वांग बना के नित्य नवीन।
जटा बढ़ा के भस्म रमा के, ले त्रिशूल पहने कोपीन॥

[५]

पर हूँ कितना अधम धूर्त मैं, किस पर प्रकट नहीं यह बात।
दुनिया को ठगता रहता हूँ, दिन-दोपहर और अधरात॥
तेरा बनकर झूठ-मूठ ही, लोगों से पुजवाता हूँ।
योगी और सिद्ध मैं बनकर, अपना रङ्ग जमाता हूँ॥

[६]

पर मैं माता कैसा खल हूँ, यह सब तुमसे छिपा नहीं।
तुझसे भी तो मतलब अपना, सदा गांठता दौड़ यहीं॥
कलि-सन्तति-माला यदि कोई, तो है मेरा उसमें नाम।
लिखा हुआ वह सबसे पहले, देख पड़ेगा सुघर ललाम॥

[७]

जब चाहा तब पूजा तुझको, और नहीं तो कौन कहां।
मन की वृत्ति झपटती रहती, कभी यहां तो कभी वहां॥
पर ऐसे लम्पट को भी तू, देती शरण सदा सुखमान।
सचमुच तू ही है जग-जननी, तू ही है मा दयानिधान॥

पुष्पाञ्जलि

[१]

तेरी याद मात्र से होते, सारे दुःख आप ही दूर।
तेरी पूजा के करने से, सिद्धि हाथ लगती भरपूर॥
तेरे ध्यान-भजन से सत्वर, मिल जाती है कीर्ति ललाम।
जननी धन्य भाग्य है उसका, जो जपता है तेरा नाम॥

[२]

तेरी कृपादृष्टि से सारे, भय विह्वल हो जाते भाग।
तेरी पूजा मङ्गलकारी, मिलता फल जैसा अनुराग॥
विनती करने से इच्छायें, फलीभूत सब होती हैं।
आधि-व्याधियाँ इधर-उधर सब, जा-जाकर के रोती हैं॥

[३]

परमानन्द ज्ञान-सागर तू, तेज-रूप तेरा है भव्य।
तेरे चरणों पर सिर रखना, सब देवों का पुनीत कर्तव्य॥
ऋद्धि-सिद्धि सब सत्ता तेरी, तू ही करती है उत्पन्न।
पालन और विनाश सभी का, करती तू ही है सम्पन्न॥

[४]

तीनों गुण तुममें हैं सुन्दर, तू भक्तों को प्यारी है।
दिव्य मूर्तिवाली हे माता, विनती एक हमारी है॥
मुझ जैसे साधारण जन की, पूजा जो कुछ है माता।
ग्रहण कीजिये दया दिखाकर, तू है त्रिभुवन की त्राता॥

[५]

तीनों तापों से पीड़ित हूँ, व्याकुल तेरी शरण पड़ा।
तेरे सम्मुख भक्ति-भाव से, करता विनती दास खड़ा॥
नहीं अन्य का नाम कभी भी, कहूँ सुनूँ या याद करूँ।
और न तो विनती ही कुछ भी, या चिन्तन ही कभी करूँ॥

[६]

एकमात्र तेरे चरणों की, लगन लगी मुझको रहती।
देकर सिद्धि करो रक्षा मा, एक यही मेरी बिनती॥
नहीं जानने के कारण से, या प्रमाद-वश विना विचार।
होकर विकल अधिक या थोड़ी, की पूजा मन में निरधार॥

[७]

इन त्रुटियों को दया दिखाकर, कर दे क्षमा यही बस जान।
अज्ञ पूर्ण हूँ नहीं ज्ञान कुछ, हूँ अजान लेना यह मान॥
न तो यहाँ पूजा-सामग्री, न तो क्रिया का नाम कहीं।
श्रद्धा का अभाव पूरा है, कहता हूँ सब सही सही॥

[८]

मन्त्र-रहित की सारी पूजा, नहीं छिपी यह तुमसे बात।
छोटी-बड़ी सभी त्रुटियों की, करना क्षमा तुझे है ज्ञात॥
जो कुछ काम किया है मैंने, हो महान चाहे थोड़ा।
मत विचार करना तुम इसका, बढ़िया है या है भोंड़ा॥

[९]

अपनी कुछ पुष्पों की अञ्जलि, यह अर्पित बस करता हूँ।
तेरे विमल पाद-पद्मों में, सिर अपना मैं रखता हूँ॥
माता ! बस अब कृपा कीजिये, दास लीजिये अपना मान।
यही कामना केवल मेरी, शीघ्र दीजिये अपना ध्यान॥

—:o:—

'कौल-कल्पतरु' स्व० शुक्ल जी की अन्य अनूठी कृति

विनय सुधा (पद्य) १.००
कौल-कीर्तन (,,) १.२५
दुर्गा सप्तशती (शब्दशः पद्यानुवाद) १.५०

साधक का सवाद (कथा-वार्ता) ४.००
धर्म-मार्ग पर (उपन्यास) ४.५०
शाक्त-धर्म क्या है ? (गद्य) ३.००
आदि आदि

इस सन्दर्भ में स्वर्गीय पूज्य शुक्ल जी की बे-जोड़ साहित्यिक आत्म-कथा 'सम्पादक के पचीस बर्ष' मूल्य ६) और आलोचना-प्रधान लोक-संग्रह 'कुछ खरी-खरी, मूल्य ३) पठनीय है।

भगवती षोडशी-सम्बन्धी कृतियाँ

श्री बाला नित्यार्चन ४), श्री ललिता नित्यार्चन ४),
श्री षोडशी नित्यार्चन ४), अन्य पुस्तकों हेतु सूचीपत्र मँगावें

प्रकाशक

शिवदेवी शुक्ल

शिवदेवी प्रकाशन

कल्याण मन्दिर

अलोपीबाग मार्ग

प्रयाग—६ (उ० प्र०)

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण

चैत्र २०२६

मूल्य १.००

मुद्रक

पण्डित राजनारायण मिश्र

परावाणी प्रेस

अलोपीबाग मार्ग

प्रयाग—६ (उ० प्र०)

'कौस्त-कल्पतरु' साधनमाला

का

दूसरा पुष्प

"पात्र वन्दना"

शीघ्र ही
पाठकों के कर कमलों में
अर्पित होगा

शिवदेवी प्रकाशन

कल्याण मन्दिर, प्रयाग--६